विपाक सूत्र : एक परिचय

● श्री जम्बू कुमार जैन

विपाक का अर्थ होता है— फल या परिणाम। विपाक सूत्र में सत्कर्मों का फल सुखरूप तथा दुष्कर्मों का फल दुःखरूप प्रतिपादित किया गया है। दुःखविपाक एवं सुखविपाक दोनों के दश—दश अध्ययनों द्वारा कर्म-फल को सोदाहरण स्पष्ट कर पापकर्मों के परित्याग एवं सत्कर्मों के उपादान की प्रेरणा की गई है। श्री जैन सिद्धान्त शिक्षण संस्थान, जयपुर के पूर्व छात्र एवं वरिष्ठ स्वाध्यायी श्री जम्बूकुमार जी ने विपाकसूत्र के प्रतिपाद्य को संक्षेप में स्पष्ट किया है। —**सम्पादक**

अंगसूत्रों में विपाक सूत्र ग्यारहवाँ अंग सूत्र है। इसके दो श्रुत स्कंध हैं— १. सुख विपाक और २. दुःख विपाक। दुःख विपाक में पाप कर्मों का तथा सुख विपाक में पुण्य कर्मों का फल प्रतिपादित किया गया है। किस प्रकार का कर्म करने पर किस प्रकार का फल प्राप्त होता है, यही विपाक सूत्र का मुख्य प्रतिपाद्य विषय है। अशुभ कार्य का फल कभी सुखद नहीं होता तथा शुभ कार्य का फल कभी दुःखद नहीं होता। बबूल का पेड़ बोकर उससे आम प्राप्त नहीं किए जा सकते अर्थात् कर्म के अनुसार ही फल प्राप्त होता है।

आचार्य वीरसेन ने कर्मों के उदय एवं उदीरणा को विपाक कहा है। आचार्य पूज्यपाद ने विशिष्ट या नाना प्रकार के पाक को विपाक कहा है। आचार्य अभयदेव ने पुण्य-पाप रूप कर्मफल का प्रतिपादन करने वाले सूत्र को विपाक सूत्र कहा है।

समवायांगसूत्र में विपाकसूत्र को सुकृत और दुष्कृत कर्मों के फल (विपाक) को बतलाने वाला आगम कहा गया है। स्थानांग में विपाकसूत्र का नाम कर्म विपाकदशा प्रयुक्त हुआ है।

विपाकसूत्र में कर्म फल की बात बतलायी गई है, अतः कर्म के संबंध में जानकारी आवश्यक है। राग—द्वेष से युक्त संसारी जीव में प्रतिसमय परिस्पंदन रूप जो क्रिया होती रहती है, उसको सामान्य रूप से पाँच रूपों में मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग में वर्गीकृत कर सकते हैं। इनके निमित्त से आत्मा के साथ कर्म-वर्गणा के अचेतन पुद्गल परमाणु आते हैं और वे राग-द्वेष का निमित्त पाकर आत्मा के साथ बंध जाते है, इसे कर्म कहते हैं। संक्षिप्त में कहें तो मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग से जीव द्वारा जो किया जाता है, उसे कर्म कहते हैं। जब तक आत्मा के साथ कर्म लगे रहते हैं तब तक जीव अनेक जन्म धारण कर इस संसार सागर में गोते लगाता रहता है अर्थात् पुनर्जन्म लेता है। जब सम्पूर्ण कर्मों का क्षय हो जाता है तो वह मुक्त हो जाता है, फिर उसे जन्म लेने की आवश्यकता नहीं होती।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

विपाक सूत्र के प्रत्येक अध्ययन में पुर्नजन्म की चर्चा है। संसार में कोई व्यक्ति दु:ख से पीड़ित है तो कोई सुखसागर में तैरता दिखाई देता है। ऐसा क्यों होता है, इसी को विपाकसूत्र में सम्यक् रूपेण समझाया गया है। जो अन्याय, अत्याचार, मांसभक्षण, वेश्यागमन करता है तथा दीन-दु:खियों को पीड़ित करता है उसके द्वारा विभिन्न प्रकार की यातनाएँ एवं महादु:ख भोगा जाता है, इसका वर्णन इस सूत्र में किया गया है। इसे दु:खविपाक के नाम से जाना जाता है। सुखविपाक में सुपात्रदानादि का प्रतिफल सुख बताया गया है। इस आगम में पाप और पुण्य की गुरु-ग्रन्थियों को सरल उदाहरणों द्वारा उद्घाटित किया गया है। जिन जीवों ने पूर्वभवों में विविध पापकृत्य किए, उन्हें आगामी जीवन में दारुण वेदनाएँ प्राप्त हुई, दु:ख विपाक में ऐसे ही पापकृत्य करने वाले जीवों का वर्णन है और जिन्होंने पूर्वभव में सुकृत किए, उन्हें फलरूप में सुख उपलब्ध हुआ, सुख विपाक में ऐसे ही जीवों का वर्णन है।

रचनाकाल– इसकी रचना कब हुई, इसका कोई स्पष्ट उल्लेख उपलब्ध नहीं होता है। समवायांग के पचपनवें समवाय में भगवान महावीर द्वारा अंतिम समय में पुण्य कर्मफल तथा पापकर्मफल को प्रदर्शित करने वाले पचपन–पचपन अध्ययन धर्मदेशना के रूप में प्रदान करने का उल्लेख है। कई चिन्तक यह मानते हैं कि यह वही विपाक सूत्र है जो आज उपलब्ध है, अब इसके पैंतालीस–पैंतालीस अध्ययन विस्मृत हो गये हैं, किन्तु यह मन्तव्य किसी भी दृष्टि से युक्ति संगत नहीं बैठता है। नन्दीसूत्र में विपाक सूत्र के बीस अध्ययनों का उल्लेख मिलता है, किन्तु वर्तमान में इसका बहुत बड़ा भाग विस्मृत हो गया है तथा इसका आकार काफी छोटा हो गया है। वर्तमान में छोटे आकार के बीस अध्ययन वाला विपाक सूत्र ही उपलब्ध है। ये अध्ययन छोटे-छोटे होने पर भी बड़े ही रोचक, प्रेरणास्पद एवं हृदय को छूने वाले हैं। इन अध्ययनों को पढ़कर मुमुक्षु साधक अपने को पापकर्मों से बचाकर शुभ कर्मों में लगा सकता है तथा अपना मानव जीवन सफल कर सकता है। यह सूत्र १२१६ श्लोक प्रमाण है।

विषयवस्तु– विपाक सूत्र के दो श्रुतस्कन्ध हैं– १. दु:खविपाक और २. सुख विपाक। इनमें प्रत्येक में १०–१० अध्ययन हैं, जो निम्न प्रकार हैं–

दु:खविपाक के अध्ययन	सु:खविपाक के अध्ययन
१. मृगापुत्र	१. सुबाहुकुमार
२. उज्झितक	२. भद्रनंदी
३. अभग्नसेन	३. सुजातकुमार
४. शकट	४. सुवासव कुमार
५. बृहस्पतिदत्त	५. जिनदास कुमार

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

६. नन्दिवर्द्धन	६. धनपति
७. उम्बरदत्त	७. महाबल कुमार
८. शौरिकदत्त	८. भद्रनंदी कुमार
९. देवदत्त	९. महाचन्द्र कुमार
१०. अंजू	१०. वरदत्त कुमार

दुःखविपाक

इसमें कुल १० अध्ययन हैं। इसमें पहला अध्ययन ही विस्तृत है, शेष संक्षिप्त हैं। प्रथम अध्ययन में मृगापुत्र का वर्णन है। मृगापुत्र जन्म से ही अंधा, बहरा, लूला, लंगड़ा और हुंडक संस्थानी था। उसके शरीर में कान, नाक, ऑख, हाथ, पैर आदि अवयवों का अभाव था, मात्र उनके निशान थे। वह जो भी आहार लेता वह भस्मक व्याधि के प्रभाव से तत्काल हजम हो जाता तथा तुरन्त ही रुधिर और मवाद के रूप में बदल जाता था। उसकी इस बीभत्स दशा के संबंध में गौतम स्वामी ने भगवान महावीर से जिज्ञासा की। भगवान महावीर ने उत्तर में फरमाया कि पूर्वजन्म में वह विजयवर्द्धमान नामक खेट का शासक इक्काई नामक राष्ट्रकूट(प्रान्ताधिपति) था। वह अत्यन्त अधर्मी, अधर्मदर्शी, अधर्माचारी था। उसे प्रजा को दुःख देने में आनन्द आता था। वह रिश्वतखोर था तथा निरपराधी जनों को तंग करता था। रात-दिन पापकृत्यों में लीन रहता था। इन कृत्यों का तात्कालिक फल यह हुआ कि उसके शरीर में सोलह महाकष्टदायी रोग उत्पन्न हो गएँ वह दुःख भोगता हुआ अन्त समय में मरकर प्रथम नारकी में उत्पन्न हुआ। वहाँ दारुण वेदनाएँ भोगकर आयु पूर्ण होने पर यहाँ मृगाराणी की कुक्षि से मृगापुत्र के रूप में उत्पन्न हुआ है। आगे भी वह अनेक भवों में दुःख भोगता हुआ अन्त में मनुष्य भव प्राप्त कर संयम की साधना कर मुक्त होगा।

द्वितीय अध्ययन में उज्झितक द्वारा पूर्वभव में पशुओं को अनेक प्रकार के कष्ट देने, मांस, मदिरा का सेवन करने तथा वर्तमान भव में जुआ खेलने, शराब सेवन करने, चोरी करने तथा वेश्यागमन के कारण शूली पर चढ़ने का वर्णन है। तृतीय अध्ययन में अभग्नसेन द्वारा पूर्वभवों में अण्डों का व्यापार करने, उन्हें भूनकर खाने के कारण वर्तमान भव में विवश होकर अपना ही मांस खाने, अपना ही रुधिर पीने तथा सरेआम फांसी पर चढ़ने का वर्णन है। चतुर्थ अध्ययन में शकटकुमार द्वारा पूर्वभव में पशुओं का मांस बेचने तथा वर्तमान भव में वेश्यागमन एवं परस्त्रीगमन के कारण तृतीय अध्ययन के समान ही कष्ट भोगने का वर्णन है। पाँचवें अध्ययन में बृहस्पतिदत्त का वर्णन है। पूर्वभवों में ब्राह्मणों की बलि चढ़ाने तथा वर्तमान भव में परस्त्रीगमन के कारण बृहस्पतिदत्त को घोर कष्ट उठाने पड़े तथा शूली पर चढ़ाया गया है। छठे अध्ययन में नंदीवर्द्धन द्वारा पूर्वभवों में जेलर के पद पर रहते हुए कैदियों को यातनाएँ देने तथा वर्तमान भव में राज्यलिप्सा के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कारण घोर कष्ट उठाने तथा असमय में ही मृत्यु का ग्रास बनने का वर्णन है। सातवें अध्ययन में उम्बरदत्त द्वारा पूर्वभवों में मांसाहार एवं मदिरा सेवन करने के कारण वर्तमान भव में अनेक शारीरिक रोगों से पीड़ित होने का वर्णन है। आठवें अध्ययन में शौरिदत्त का वर्णन है। पूर्वभवों में पशुपक्षियों का मांस पकाने तथा वर्तमान भव में मछली का व्यापार करने, उसका सेवन करने के कारण गले में मछली का कांटा फंस जाने के कारण दारुण दुःख एवं असाध्य वेदना सहने का वर्णन है। नवम अध्ययन में देवदत्ता द्वारा पूर्वभवों में स्त्रियों को जलाकर मारने तथा वर्तमान भव में अपनी सासू की हत्या के कारण दारुण वेदनाएँ भोगने का वर्णन है। दसवें अध्ययन में सार्थवाह की पुत्री अंजू का वर्णन है। पूर्वभव में उसके वेश्या होने के कारण अन्त समय तक कामभोगों में आसक्त रहने के कारण वहाँ से निकलकर छठी नरक में उत्पन्न हुई तथा वहाँ आयुष्य पूर्ण होने पर वर्तमान में अंजू के रूप में जन्म लिया। पूर्वकर्मों तथा विषय भोगों में प्रगाढ़ आसक्ति के कारण उसे वर्तमान भव में योनिशूल जैसी महावेदना को भोगना पड़ा।

इस तरह सभी अध्ययनों में पूर्वभव एवं वर्तमान भव में किए गए अशुभ कर्मों के कारण वर्तमान भव में दारुण वेदनाएँ भोगने का वर्णन है। इस दुःखविपाक से हम निम्नलिखित प्रेरणाएँ एवं शिक्षाएँ ग्रहण कर सकते हैं–

१. सत्ता प्राप्त होने पर उसका दुरुपयोग न करें।
२. पति की आज्ञा से मृगाराणी ने दुःसह दुर्गन्धयुक्त उस पापी मृगापुत्र की भी सेवा परिचर्या की। यह कर्त्तव्यनिष्ठा एवं पतिपरायणता का अनुपम आदर्श है।
३. जन्म-जन्मांतर तक पापाचरण के संस्कार चलते हैं इसी प्रकार धर्म संस्कार की भी अनेक भवों तक परम्परा चलती है।
४. मांसाहार में आसक्त जीवों को अनेक भवों तक कष्ट भोगने पड़ते हैं।
५. अंडों का व्यापार एवं आहार, पंचेन्द्रिय की हिंसा, मदिरा सेवन आदि प्रवृत्तियों वाला जीव प्रायः नरकगामी होता है।
६. चौर्य प्रवृत्ति भी अच्छी नहीं है। चोरी करने वाला सदैव भयाक्रांत एवं संकटग्रस्त रहता है।
७. व्यसन से अनेक कष्ट उठाने पड़ते हैं। अतः हमें व्यसनमुक्त जीवन जीना चाहिएँ
८. रूई में लपेटी हुई आग जिस तरह छुप नहीं सकती उसी तरह गुप्त पाप भी एक दिन कई गुना होकर प्रकट हो जाता है। अतः पाप को प्रकट कर शुद्धि कर लेनी चाहिएँ
९. दूसरों को दुःख देने में आनंद मानने वाला स्वयं भी प्रतिफल में दुःख ही प्राप्त करता है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

१०. दूसरों को खुश करने के लिए भी जीव पाप कर्म का सेवन करते हैं, किन्तु कर्मों का उदय होने पर उसका फल स्वयं को ही भोगना पड़ता है।

११. स्वार्थ एवं भोगलिप्सा सारे संबंध भुला देती है।

१२. भोगविलास, इन्द्रिय विषयों के सुख या आनंद जीव के लिए मीठे जहर के समान है।

१३. व्यक्ति अपने घराणे, सत्ता या धन का अहं भाव करता है, किन्तु तीव्र पापकर्मोदय होने पर कोई त्राणभूत, शरणभूत नहीं होता।

१४. जीवन को धर्मसंस्कारों, शुभाचरणों से भावित किया जाए तो विकट दुःख की घड़ियों को भी आसानी से सहन कर कर्मबन्ध से बचा जा सकता है।

१५. धर्माचरण के अभ्यास एवं चिन्तन से आत्मविश्वास जाग्रत होता है।

सुखविपाक

इसमें उन आत्माओं का वर्णन हैं, जिन्होंने शुभकर्मों के कारण सुख को प्राप्त किया। इसमें भी १० अध्ययन हैं जिनमें प्रथम अध्ययन सुबाहुकुमार का है। पूर्वभव में सुबाहुकुमार द्वारा निर्दोष भाव से मासखमण के पारणे में भिक्षार्थ आए मुनिराज को खीर का आहार दिया गया था, उसी के फलस्वरूप उसे वर्तमान भव में राजपरिवार में जन्म तथा अनेक सुखोपभोग के साधन उपलब्ध हुए तथा भगवान महावीर का समागम भी प्राप्त हुआ। शेष नौ अध्ययन भी सुबाहुकुमार की तरह ही हैं, केवल नगरी आदि के नाम का अन्तर है, उन्होंने भी पूर्वजन्म के शुभकर्मों के कारण वर्तमान भव में सुखोपभोग प्राप्त किया। इस सुखविपाक से हम निम्नलिखित प्रेरणाएँ ले सकते हैं—

१. भव्य आत्माएँ अधिक समय तक भोगों में आसक्त नहीं रहती, किन्तु निमित्त मिलते ही भोगों का त्याग कर विरक्त बन जाती हैं।

२. यदि हम संयम स्वीकार न कर सकें तो हमें श्रावक के व्रत अवश्य ही ग्रहण करने चाहिए।

३. दीक्षा ग्रहणोपरान्त अपना समय निर्दोष संयमाराधना एवं ज्ञान-ध्यान के चिन्तन-मनन में बिताना चाहिए।

४. सुपात्र दान देने से सम्यक्त्व की प्राप्ति एवं संसार परीत्त होता है। अतः सुपात्रदान का लक्ष्य रखना चाहिए।

५. मुनिराज के गोचरी पधारने पर शालीनता से विधिपूर्वक व्यवहार करना चाहिए।

६. एषणा के ४२ दोषों एवं गोचरी संबंधी विवेक-व्यवहार का ज्ञान श्रावकों को भी रखना चाहिए।

७. सुपात्र दान देने में त्रैकालिक हर्ष होना चाहिए, यथा दान देने के सुअवसर पर, सुसंयोग प्राप्त होने पर, दान देते वक्त, दान देकर निवृत्त हो जाने पर।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

इस तरह से विपाक श्रुत का अध्ययन करने से हमें यह जानकारी प्राप्त होती है कि किस प्रकार जीव दुष्कृत करने से दारुण वेदनाएँ भोगता है तथा सुकृत करने से अपार सुखोपभोग को प्राप्त करता है। हमें किन प्रवृत्तियों से बचना चाहिए तथा किन प्रवृत्तियों को अपनाना चाहिए। अगर हम सुख चाहते हैं तो अपना जीवन दूसरों की भलाई, कल्याण एवं परोपकार में लगाएँ स्वयं वीतराग धर्म का आराधन कर इस मानव जन्म को सफल व सार्थक बनाएँ. जीवन की सफलता सुख भोग में नहीं, भोगों के त्याग में है, इस तथ्य को सदैव स्मरण रखें।

—112/303, अग्रवाल फार्म, मानसरोवर, जयपुर

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org